ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 185-186**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

एकात्म–मानव दर्शन में वर्णित सुख–प्रत्यय की अवधारणा

डॉ० राघवेन्द्र प्रताप सिंह

असि.प्रोफेसर– दर्शनशास्त्र, बाबू अमर बहादुर सिंह विधि महाविद्यालय, कुण्डा– प्रतापगढ़, (उ0प्र0) भारत

Received-16.03.2025, Revised-22.03.2025 Accepted-30.03.2025 **E-mail : raghwendrap14@gmail.com**

सारांशः एकात्म–मानव दर्शन में मानव की मूलभूत आवश्यकता एवं उसकी प्रवृतियों का गहराई से विचार किया गया है तथा उसके श्रेष्ठता हेतु पूर्ण मानव की अवधारणा प्रस्तुत की गई है। इस प्रकार सुख–प्रत्यय भी मानव की स्वाभाविक प्रकृति है। यह प्रवृत्ति मात्र मानव ही नही वरन इस सृष्टि के समस्त जीवधारियों की है। सुख सभी की आवश्यकता है। किन्तु सभी की सुख की कल्पना भिन्न–भिन्न है। सदाचारी को सदाचार में सुख मिलता है। व्यभिचारी को व्यभिचार में। पाश्चात्य दर्शन में सुख–प्रत्यय पर मिल और बेंथम का सुखवाद बहुत ही प्रसिद्ध है, परन्तु पाश्चात्य दर्शन का सुखवाद लौकिक सुख का विचार करता है, जो केवल भौतिक है। वह स्वार्थवादी व्यवस्था पर आधारित है। एकात्म–मानववादी सुख का विचार 'सर्वमंगल मांगल्ये' की भावना से फलिभूत है।

कुंजीभूत शब्द– एकात्म–मानव दर्शन, मानव, सुख, सुखवाद, पं0 दीनदयाल उपाध्याय, संस्कृति, लौकिक सुख, युगानुकूल

एकात्म–मानव दर्शन वैदिक दर्शन पर अवलम्बित है। जिसके अनुसरण में पं0 दीनदयाल उपाध्याय ने समकालीन दृष्टिकोण से 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' जीवन पद्धति की युगानुकूल विवेचना एकात्म–मानव दर्शन के रूप में प्रस्तुत किया है।

एकात्म–मानव दर्शन व्यष्टि से समष्टि के सम्बन्ध का दर्शन है यह व्यक्तिवादी न होकर समष्टिवादी दर्शन है। इसमे मानव कल्याण की कामना है, जो प्रकृति के साहचर्य से विमुख नहीं है। यह सम्पूर्ण सृष्टि एक दूसरे की पूरक है, जो भौतिकवादी जीवन पद्धति में आध्यात्मिकता एकात्मता के भाव को संचारित करती है।

एकात्म–मानववाद में मानव जीवन के कर्त्तव्य, व्यक्ति के सुख का विचार, उसके आनन्ददायक जीवन शरीर–मन–बुद्धि–आत्मा के प्रगति का विचार तथा मानवीय आवश्यकताओं के प्रति विचार प्रस्तुत किया गया है।

एकात्म–मानववाद में मानव जीवन के प्रगति हेतु सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक दर्शन के विचार प्राप्त होते है। जिसका लक्ष्य, प्रण एवं पथ 'अन्त्योदय' है। जिसके अन्तर्गत निम्न प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास किया गया है– जिसके द्वारा व्यक्ति कैसे सुखी हो, सृष्टि में परस्पर सहयोग हो, सह अस्तित्व की भावना हो, विविधता में एकता, प्रकृति में साहचर्य हो, संस्कृति आधारित पुरुषार्थ के मार्ग पर चलकर व्यक्ति व समाज अपने परम लक्ष्य को प्राप्त हो, यही एकात्म–मानववाद का मार्ग है। जिससे परिपूर्ण मानव का निर्माण होता है तथा वह जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर पाता है।

एकात्म–मानव दर्शन में मानव की मूलभूत आवश्यकता एवं उसकी प्रवृतियों का गहराई से विचार किया गया है तथा उसके श्रेष्ठता हेतु पूर्ण मानव की अवधारणा प्रस्तुत की गई है। इस प्रकार सुख–प्रत्यय भी मानव की स्वाभाविक प्रकृति है। यह प्रवृत्ति मात्र मानव ही नही वरन इस सृष्टि के समस्त जीवधारियों की है। सुख सभी की आवश्यकता है। किन्तु सभी की सुख की कल्पना भिन्न–भिन्न है। सदाचारी को सदाचार में सुख मिलता है । व्यभिचारी को व्यभिचार में । पाश्चात्य दर्शन में सुख–प्रत्यय पर मिल और बेंथम का सुखवाद बहुत ही प्रसिद्ध है, परन्तु पाश्चात्य दर्शन का सुखवाद लौकिक सुख का विचार करता है, जो केवल भौतिक है। वह स्वार्थवादी व्यवस्था पर आधारित है। एकात्म–मानववादी सुख का विचार 'सर्वमंगल मांगल्ये' की भावना से फलिभूत है।

सुख–प्रत्यय– एकात्म–मानववाद के आधार ग्रंथ दैशिकशास्त्र में बद्रीसाह टुलधरिया सुख–प्रत्यय के बारे में लिखते है कि– "सुख क्या पदार्थ है । इस विषय में अनेक मत पाये जाते है। इन सभी में विचारास्पद केवल हमारे आचार्यो का मत है। इस मत के अनुसार सुख दो प्रकार का होता है, एक पाशव और दूसरा मानव"[1] आहार, निद्रा, मैथुन से जो तात्कालिक वेदना उत्पन्न होती है वह पाशव सुख है। ऐसा सुख पशुओं और उनके जैसी प्रवृति के मनुष्यों को आनन्द प्रदान करती है। अतएव उसे पाशव सुख कहते है।

मानव सुख के बारे में टुलधरिया जी बताते है कि अपने लक्ष्य की प्राप्ति से जो सुख प्राप्त होता है वह मानव सुख है। इस सुख में मनुष्य और मनुष्यों की विशिष्टता रखने वाले जीव आनन्दित होते है। यह चिरस्थाई सुख होता है और इस सुख की, धारणानिष्ठ कर्तव्य से नित उन्नति होती है।[2]

भारतीय संस्कृति में सुख प्राप्ति के लिए समन्वित मार्ग दर्शाया गया है। शारीरिक सुख के साथ ही मन, बुद्धि और आत्मा के सुख का भी विचार किया गया है। एकात्म–मानववाद में मानव को शरीर, मन बुद्धि व आत्मा का समुच्चय बताया गया है। अतएव एकात्म–मानववाद दर्शन में समन्वित सुख को माना गया है।

मानव के चार सुखों की विवेचना की गई है। जो शारीरिक सुख, बौद्धिक सुख, मानसिक सुख और आत्मिक सुख है । सामान्यतः मानव सुख की अपेक्षा करता है, प्रयास करता है किन्तु उसका सुख मात्र भोगवादी है जो इन्द्रीय जन्य सुख को ही सम्पूर्ण सुख मानता है । प्रश्न उठता है कि आखिर सुख कहाँ है। पं0 दीनदयाल इस सन्दर्भ में उदहारण प्रस्तुत करते है कि– ".... कुत्ते प्रायः हड्डी लिए फिरते है। सूखी हड्डी को भी वे बड़े प्रेम से चबाते है। उस हड्डी के भीतर कोई रस नहीं होता। वह बिल्कुल पत्थर होती है। लेकिन जब हड्डी की तेज नोक कुत्ते की जीभ में धसती है तो उसकी जीभ से खून बहने लगता है। कुत्ता अपने ही रक्त को पीकर सुखी होता है। उसे लगता है कि हड्डी में ही रस आ रहा है । इसी नाते कहा गया है कि बाहर की वस्तु में सुख नहीं है, सुख तो अपने भीतर भरा है। "मनुष्य शरीर सत् चित् सुखम्" यानी यह शरीर सत्य है, चिरन्तन है, चेतनायम है अर्थात् सुखमय है।"[3]

शारीरिक सुख रू सुख–प्रत्यय विचार मे इन्द्रीय जन्य सुख को मानव के लिए आवश्यक माना गया है । क्योंकि शरीर मे ही मन, बुद्धि और आत्मा का निवास होता है। अतः शरीर को कष्ट होता है तो वह मानव सुखी नही होगा। किन्तु व्यक्ति केवल शारीरिक सुख– इन्द्रीय जन्य सुख हेतु प्रयास करेगा तो वह सुख ना ही व्यक्ति के लिए हितकर होगा, ना ही समाज के लिए । मानव जीवन में शारीरिक सुख को ही साध्य मान लिया जाय तो यह एकांगी होगा। अतएव एकात्म–मानववाद के दर्शन में दीनदयाल जी ने सुख के अगले क्रम में मन के सुख की बात करते है।

मानसिक सुख रू मन का सुख क्या है और क्यो आवश्यक है? सभी भौतिक सुख–सुविधाओं के बावजूद भी अगर मन में कोई उद्वेग है तो मानव दुःख का ही अनुभव करता है। सभी आवश्यकताओं के संसाधन होते हुए भी जेल में बंद कैदी को सुख नहीं

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

होता। क्योकि उसका मन बंधन में है। मानसिक सुख की संकल्पना बताते हुए दीनदयाल कहते है कि – "भगवान कृष्ण जब कौरवों के यहाँ सन्धि करने के लिए गए तो दुर्योधन ने उनको बुलाया और कहा महाराज हमारे यहाँ भोजन करने के लिए आइए । भगवान कृष्ण दुर्योधन के यहाँ भोजन करने नहीं गये किन्तु विदुर के यहाँ गये। जब विदुर के यहाँ पहुचे तो वहाँ हालात ऐसी हो गई कि विदुर की पत्नी ने अत्यधिक आनन्द के मारे केले के छिलके छील–छील कर भगवान कृष्ण के सामने डाल दिए और गूदा दूसरी तरफ फेंक दिया । भगवान कृष्ण भी उन छिलको को ही आनन्द पूर्वक खाते रहे। इसलिए लोग कहते है– भाई! आनन्द के साथ सम्मान के साथ यदि रुखी भी मिल जाय तो बहुत अच्छी हे, परन्तु अपमान के साथ मेवा भी मिले तो उसे छोड़ना चाहिए । इसलिए मन के सुख का भी विचार करना पड़ता है।[4]

बौद्धिक सुखः मानव के लिए बौद्धिक सुख की अत्यन्त आवश्यकता है। बौद्धिक सुख से शारीरिक सुख एवं मानसिक सुख भी प्राप्त किया जा सकता है। अगर बौद्धिक शान्ति न रहे तो शारीरिक सुख के बाद भी व्यक्ति कष्ट में रहता है । दीनदयाल कहते है कि आपको अच्छा भोजन, प्रेम मिले परन्तु मन में उलझन बैठी रहे तो हालात पागलों की तरह हो जाती है।[5] अतएव मानव को बौद्धिक सुख की भी आवश्यकता है। वैज्ञानिको और तत्वज्ञों को उनके गहन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त होने का आनन्द बुद्धि के सुख का प्रमाण है।

आत्मिक सुखः एकात्म–मानववाद में सुख के अगले क्रम में आत्मसुख का विचार किया गया है। एकात्म–मानववाद मानव को शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा का समुच्चय बताता है। अतः आत्म–सुख के विचार के बिना सुख का विचार पूर्ण नहीं होगा। उपाध्याय जी कहते है कि बुद्धि का सुख भी अन्तिम और परम सुख नहीं है । बुद्धि से भी श्रेष्ठ सुख आत्मा का होता है। आत्मिक सुख प्राप्त हो जाने पर मनुष्य का व्यक्तित्व इतना विशाल हो जाता है। कि पराये पन का भाव समाप्त हो जाता है। ईष्या, द्वेष, मोह, माया से उपर उठ जाता है जो पूर्ण–मानव के विचार को पुष्ट करता है। आत्मिक सुख के बारे में गीता में वर्णित है –

"प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्
उपैति शान्तरजसं ब्रह्ममूलम् कल्मषम्।।"[6]

जिसका मन शान्त है, जिसका मोह क्लेश समाप्त हो गया है। सबकुछ ब्रह्म ही है ऐसा मानने वाला है उसे उत्तम सुख प्राप्त होता है। एकात्म–मानववाद के प्रेरक ग्रंथ दैशिक शास्त्र में सुख के तीन प्रकार के लक्ष्य बताये गये है। **1–सात्विक, 2–राजसिक, 3–तामसिक**

जिस सुख से बुद्धि को प्रसन्नता प्राप्त होती है वह सात्विक होता है। वह शुरु में विष के समान होता है परन्तु अन्ततः अमृत तुल्य होता है। राजसिक–सुख इन्द्रिय से प्राप्त होता है। वह आरम्भ मे परम आनन्द प्रदान करता है परन्तु परिणामतः विष समान होता है । तामस सुख, सुख के प्रमाद से उत्पन्न होता है। यह आरम्भ से अन्त तक मोहकर होता है।

साथ ही मानव सुख के लिए चार साधनों की विवेचना की गई है।[7]

1–सुसाध्य आजीविका, 2–शान्ति, 3–स्वतंत्रता, 4– पौरुष

बद्रीसाह टुलधरिया जी के शब्दों में देखे तो – "इनका अभाव अर्थात् कष्ट साध्य आजीविका चिन्ता, परतन्त्रता और क्लैव्य मानव सुख के मुख्य विघ्न होते है । क्योंकि कष्ट साध्य आजीविका से मनुष्य सदा जीवन यात्रा के गोरख धन्धों में उलझा रहता है ।... परतन्त्रता से वह असमर्थ हो जाता है; क्लेव्य से वह निरुत्साह हो जाता है । यह सिद्ध है कि समयहीन, बुद्धिहीन, सामर्थहीन और उत्साहहीन मनुष्य का लक्ष्य सिद्ध नही हो सकता है अर्थात् उसको मानव सुख प्राप्त नही हो सकता है ।"[8] मानव के सुख पूर्ति हेतु पं० दीनदयाल जी ने सुसाध्य आजीविका, शान्ति, स्वतंत्रता, पौरुष की प्राप्ति हेतु शिक्षा के लक्ष्यों को विवेचित करते है ।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. टुलधरिया बद्रीसाह, दैशिक शास्त्र, दीनदयाल उपाध्याय प्रकाशन लखनऊ। वर्ष 2002, पृ0– 2
2. वही पृ0– 2
3. उपाध्याय दीनदयाल, एकात्म मानवाद एवं समीक्षा, दीनदयाल उपाध्याय प्रकाशन, लखनऊ । वर्ष 1998 पृ0–82
4. वही पृ0– 21
5. वही पृ0– 22
6. श्रीमद्भगवदगीता अध्याय 6 श्लोक 27
7. टुलधरिया बद्रीसाह, दैशिक शास्त्र, दीनदयाल उपाध्याय प्रकाशन लखनऊ। वर्ष 2002, पृ0– 3
8. वही पृ0– 3

*****